बलूचिस्तान का आत्मनिर्धारण ?

द्वारा

मोहन गुरूस्वामी

इस वर्ष 2 जनवरी को चार पाकिस्तानी सैनिकों ने पाकिस्तान पेट्रोलियम लिमिटेड द्वारा नियुक्ति एक महिला चिकित्सक के साथ इसी के सूई गैस क्षेत्र में बलात्कार किया। जब पाकिस्तानी अधिकारियों ने केस दर्ज करने से इनकार कर दिया तो यह मामला बलूचिस्तान के शक्तिशाली बुग्री दल के प्रमुख अकबर खान बुग्री के पास पहुँचा। बाद के कुछ दिनों में क्रोधित मूलानिवासियों ने सूई स्थित पी.पी.एल (पाकिस्तान पेट्रोलियम लि.) के प्रतिष्ठिान, जो क्वेटा से दक्षिण पूर्व दिशा में 350 कि.मी. दूर है – पर आक्रमण कर उस पर 14000 राउंड गोलियाँ चलायीं, 435 मोर्टार छोड़े और 60 रॉकेट दागे। सूई के रिफाइनरी (पारिष्करणशाला) और गैस निकालने वाले स्टेशनों पर हुए इस हमले केकारण कराँची और इसके आस–पास के औद्योगिक क्षेत्रों में (गैस की) आपूर्ति ठप्प हो गयी। मूलनिवासियों ने रेल लाइनों को भी उड़ा दिया है और क्वेटा पर रॉकेट दागे हैं। पाकिस्तान सरकार ने टैंक, हेलीकाप्टर और तोपों से सुसज्जित कई हजार फौजियों को (क्षेत्र में) फैला दिया है। एक अमेरिकन समाचार पत्रिका ने मेंगल समुदाय के प्रमुख सरदार अताउल्लाह खाँ को यह कहते हुए उद्धृत किया है कि, " यह हमारी आखिरी लड़ाई हो सकती है। इसकी समाप्ति पर या तो उनके सैनिक जिन्दा बचेंगे या हमलोग।" नये कठोर शब्द हैं पर बलूचिस्तान भी कठोर भूमि है। यह कठोर भूमि

अब भारत के विकास ऊर्जा कूटनीति में केन्द्रिय भूमिका निभा सकती है क्योंकि प्रत्सावित ईरान–भारत तेल पाइप लाइन बलूचिस्तान से होकर जाएगी।

बलूचिस्तान लगभग 3.5 लाख वर्ग कि.मी. में फैला एक पहाड़ी मरूस्थल क्षेत्र है, जो पाकिस्तान की कुल भूमि का 45% है और इसकी जनसंख्या 75 लाख से थोड़ी अधिक या जम्मू–कश्मीर की जनसंख्या के लगभग बराबर है। क्वेटा बलूचिस्तान की राजधानी है। यहाँ के लोग मुख्यतः बलूच और पठान मूल के हैं । किसी समय (अच्छे समय) में यह एक विद्रोहात्मक संगठन रहा होगा। लेकिन अब बलूचिस्तान भी भावी (अगला) भू–राजानीतिक केन्द्र बनने की ओर अग्रसर है। बलूचिस्तान की सीमा ईरान और अफगनिस्तान से लगती है और इसकी दक्षिणी सीमा अरब सागर है, जहाँ मकरान तट पर सामरिक रूप से महत्वपूर्ण ग्वादर का बंदरगाह है जो होर्भूज की जलसंधि को नियंत्रित करता है। ग्वादर में चीनी कई अरब डालर की लागत से विशाल बंदरगाह बना रहे हैं और कहते हैं कि यहाँ चीनी नेवी के लिए सुविधाएँ तलाशी जा रही हैं। दलबदीन और शाम्सी में अमेरिका के हवाई अड्डे हैं जहाँ से यह अपने वायुयानों और विशिष्ट (स्पेशल) सैनिकों के द्वारा अफगानिस्तान पर हमला करता है। इसमें थोड़ा भी संदेह नहीं है कि ईरान पर आक्रमण की जो संभावना बन रही है उसमें ये दोनों हवाई अड्डे प्रमुख भूमिका निभाएँगे। अमेरिका के अत्यंत सम्मानित पत्रकार सेमर हर्श ने 24–31 जनवरी के 'द न्यूयार्कर' में लिखा है कि संयुक्त अमेरिका की स्पेशल फोर्स टीम पहले से ही ईरान में सक्रिय हैं।

कुर्दों की तरह बलूच भी ऐसे लोग हैं जो आधुनिक राजनीतिक भूगोल निर्माताओं द्वारा उपेक्षित किये गए हैं। 1.82 लाख वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में सिस्तान और बलूचिस्तान का इरानी प्रांत फैला हुआ है और (इस क्षेत्र की) जनसंख्या 25 लाख से अधिक है। इसकी राजधानी जहेदान है। इस प्रकार एक पुनर्निमित संसार में बलूचिस्तान के पास एक करोड़ से अधिक जनसंख्या है और ईरान या अफगानिस्तान से भी अधिक क्षेत्रफल है। अफगानिस्तान से भिन्न, बलूचिस्तान के पास प्राकृतिक संपदा है और सामरिक महत्व की अवस्थिति है। संयुक्त राज्य (यू.एस़) की नेशनल सेक्यूरिटी काउन्सिल ने कहा है कि वह अपने दूरगामी सामरिक लक्ष्यों के रूप में इस पर विचार कर रही है। और तेल कुँओं को अपने नियंत्रण में रखने और चीनियों को दूर रखने से ज्यादा सामरिक और क्या हो सकता है।

अपने अधिकांश समय (इतिहास) में बलूचों ने खुद को एक असंगठित जनजातीय संघ के रूप में संचालित किया है। बलूच एक प्राचिन जाति है। 325 ई.पूर्व में जब सिकन्दर अपने निष्फल भारत अभियान के बाद मकरान मरूस्थल से होकर बेबिलोन लौट रहा था तब युनानियों को छापा मार बलूचियों के कारण भयानक संकट का सामना करना पड़ा था। कहा जाता है कि मूलतः वे सिरिया में एलेप्पो के पास से आए थे और इस बात के भी पर्याप्त भाषिक प्रमाण हैं कि वे पार्सियन और कुर्दों की तरह समान मारोपीय उप–समुदाय से संबंध रखते हैं। 711 ई. में मुहम्मद बिन कासिम की अरब विजयी सेना

के दबाव के कारण इन्होंने इस्लाम ग्रहण किया। इनका मूल जो भी हो पर 1000 ई. तक ये अपने वर्तमान क्षेत्र में पूरी तरह स्थापित हो चुके थे। कवि फिरदौसी ने फारसी महाकाव्य 'द बुक ऑफ किंग्स' में उनका वर्णन करते हुए लिखा है "वीर बलूची और कुचों को हमने मेंड की तरह लड़ते हुए देखा जो युद्ध के प्रति पूरी तरह कृत संकल्प (समर्पित) थे।" इस क्षेत्र में अपेक्षाकृत देर से पहुँचने के कारण बलूचों को पहले के कब्जा जमाए लोगों (दखलकारों) जैसे–ब्रहुई, से युद्ध करना पड़ा जो आज भी कला के आस–पास फैले हुए हैं। ब्रहुई भाषा द्रविड़ियन भाषा परिवार से संबंधित है और तमिल (भाषा) से जुड़ती है। बिल्कुल स्पष्ट है कि आर्यों के आक्रमण के बाद उत्तर भारत में जीवित बचाने वाली ब्रहुई एकमात्र द्रविड़ियन (भाषा) है।

(यायावर) बलूच जाति के लोग सिंधु नदी द्धारा सिंचित अधिक उपजाऊ प्रदेशों की ओर स्वभावतः पूरब की ओर बढ़ते गए लेकिन वे मुगल शक्ति द्धारा रोक दिए गए। लेकिन आज भी पंजाब और NWFP के शहरों के डेरा गाजी खान और डेरा इस्माइल खान जैसे नाम बलूची छाप की याद दिलाते हैं। मोहन–जोदड़ो और हड़प्पा के द्रविड़ों–जो बिना किसी चिह्न (आवशेष) के गायब हो गए– से भिन्न ब्रहुइयों ने जब कालत में अपनी शक्ति स्थापित कर ली तो एक अखिरी हुर्रा बनाया। 18वीं सदी तक कालत बलूचिस्तान की प्रमुख शक्ति था और कालत का खान पूरे क्षेत्र का शासक था। परन्तु ब्रहुइयों को बहुसंख्यक बलूचियों में सम्मिलित हो जाने की कीमत चुकानी पड़ी। ब्रहुई भाषा अभी भी छोटे क्षेत्र में बची हुई है लेकिन बस नाम के लिए। मेरे स्वर्गीय पिता

जिन्होंने 1940 के शुरूआती दिनों में क्वेटा के ब्रिटिश भारतीय डिफेंस सर्विस स्टाफ कालेज में नौकरी की थी, मुझसे अक्सर कहते थे कि स्टाफ कालेज में काम करने वाले स्थानीय आदिवासी जो भाषा बोलते थे वह सुनने में बिल्कुल तमिल की तरह लगती थी। पिछले साल कराँची के राष्ट्रीय संग्रहालय में ब्रहुई बोलने वाले स्कूली बच्चों के एक दल से मिला था। मैंने उनसे पूछा कि वे अपने गाँव को क्या कहते हैं और उन्होंने जवाब दिया 'उरू', जो बिल्कुल उसी रूप में तमिल में भी है।

ब्रिटिश पहली बार इस क्षेत्र में 1839 ई. में पहुँचे जब वे काबुल जाने के लिए सुरक्षित मार्ग की तलाश कर रहे थे। 1841 ई. में उन्होंने 'कालत' के साथ समझौता किया। अफगानिस्तान पर लार्ड ऑकलैंड के विध्वंशकारी आक्रमण के फलस्वरूप ब्रिटिशों ने सिंध पर अनमने भाव से कब्जा किया, मॉन्स्टूअर्ट एलफीन्सन ने (इस पर) कहा था कि "एक दबंग जो गलियों में लतिया दिया जाता है, वह बदले में घर जाकर पत्नी को पीटता है।" ब्रिटिशों ने 1813 ई. में सिंध पर कब्जा एक बलूची राजवंश तालपुर मिर्स से लिया। ब्रिटिश जानते थे कि उन्होंने जो किया वह गलत था जो कि कब्जा जमाने के बाद सर चार्ल्स नेपियर द्बारा भेजे गए संदेश से स्पष्ट होता है। संदेश में यह कहने के लिए कि "मेरे पास सिंध है" लैटिन के एक अद्‌भुत नाटक के नाम पर सिर्फ 'पेक्कवी' लिखा हुआ था जिसका अर्थ है " मैंने अपराध किया है।"

27 जून 1839 को रणजीत सिंह की मृत्यु हो गयी और दस वर्षों के भीतर ही, – भारत में ब्रिटिश स्वामित्व को एक मानचित्र में दिखाए जाने पर की गई–उनकी महान भविष्यवाणी कि "एक दिन सब लाल हो जाएगा" सत्य हो गयी। 29 मार्च 1849 को सिक्खों के औपचारिक समर्थन और पंजाब पर कब्जे के बाद ब्रिटिश (प्रशासन) के पास बलुच के साथ एक लम्बी सीमा हो गयी। लेकिन अफगानों के साथ हुए युद्ध के विनाशकारी अनुभवों से सीख लेते हुए उन्होंने सामान्यतः बलूचियों को सीमाओं का अतिक्रमण न करने के आश्वासन को सुरक्षित रखना पसंद किया। फिर भी, 1876 में अंग्रेजों ने बलूचियों पर एक और समझौता लाद दिया और लाभप्रद क्वेटा को पट्टे पर उन्हें देने के लिए कालत के खान को मजबुर किया। बलूचिस्तान पर खान की हुकूमत अभी भी चल रही थी लेकिन अब एक ब्रिटिश मंत्री की चौकस किन्तु कृपापूर्ण दृष्टि के अधीन। कालत के खान के अन्य निरर्थक राजकुमारों से अलग इस कारण माना जाता था कि उसे 19 बंदूकों की सलामी दी जाती थी। सुरक्षा संबंधी निश्चिंतता और अधिकांशतः स्वच्छंद आंतरिक शक्ति के कारण खान अपव्ययी और अक्सर सनकी का जीवन जीता था। जैसे एक खान जूतों का संग्रह करता था और अपने संग्रह की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए सभी छोड़े हुए जूतों को कालत के अपने किले के एक गहरे तहखाने में बंद करके रखता था।

हैदराबाद और काश्मीर के शासकों की तरह कालत के खानों का जो भी सनकीपन (बेतुकापन) रहा हो उन्होंने ब्रिटानियों द्वारा स्थापित व्यवस्था के अधीन संभव स्वतंत्रता

की चरम सीमा का आनंद तब तक उठाया जब तक कि सनक एक दायरे में रहा और ब्रिटिश हित के खिलाफ नहीं हुआ। यह व्यवस्था 1947 तक जारी रही। (1947 के बाद) इन तीनों ने समान रूप से स्वतंत्र शासक बने रहने का जोरदार प्रयास किया। इस मामले में कालत का खान 'मीर अहमद यान खान' कश्मीर से हरि सिंह और हैदराबाद के ओसामा अली खान से बीस पड़ा। उसने स्वतंत्रता की घोषण कर दी जबकि शेष दो हार मान लिए और समय (घटनाओं) को खुद पर हावी होने दिया। हैदराबाद से भिन्न, यह स्पष्ट था कि अधिकांश जनता खान का समर्थन कर रही थी। NWFP के पठानों की तरह बलूची पाकिस्तान के विचार से बहुत उत्साहित नहीं थे। NWFP में मुहम्मद अली जिन्ना द्वारा मार्गदर्शित (नित) अलगाववादी मुस्लिम लीग को वास्तव में चुनाव में अस्वीकार कर दिया गया। फिर भी खान के स्वतंत्रता के घोषणा के आठ महिने ही पाकिस्तानियों ने बलूचिस्तान पर जबरन कब्जा कर लिया। लेकिन एक स्वतंत्र राज्य की बलूची महत्वाकांक्षा पूरी तरह शान्त नहीं हुयी। 1973 में बलूचिस्तान में स्वतंत्रता का एक युद्ध भड़क उठा।

पाँच वर्षों तक वहाँ कवल युद्ध होता रहा। इसके चरम पर बलूचियों ने 55000 लड़ाकुओं की एक सेना तैयार कर डाली। लगभग छह पाकिस्तानी सेना विभाग उनसे लड़ने के लिए नियुक्त हुए। पाकिस्तानी वायु सेना का भी इस्तेमाल किया गया और इसके मिराज और साबरे लड़ाकू जेटों ने ग्रामीण बलूचिस्तान पर चारो तरफ से हमला किया। टेक्सास और सेलिग हैरीसन विश्वविद्यालय के राबर्ट वाइसींग जैस विद्वानों ने

व्यापक नापाल्मों (बमों) के प्रयोग का उल्लेख किया है। सैनिक कार्रवाई में ईरान भी शामिल हो गया और इसके वायुसेना की हुए कोबरा हेलिकाप्टर गनशिप का पर्याप्त प्रयोग हुआ। उस समय का आखिरी युद्ध 1978 में लड़ा गया जिसमें 5000 बलूची योद्धा और 3000 पाकिस्तानी सैनिक मारे गए थे। सामान्य (असैनिक) नागरिक हताहतों की संख्या उनसे कई गुना अधिक है। स्वतंत्रता के लिए (लड़ा गया) बलूची युद्ध कुचल दिया गया पर आकांक्षाएँ अभी भी स्फूरित होती (झिलमिलाती) हैं।

9 मार्च से 27 अप्रैल 2001 के मध्य जेनेवा में हुयी मानवाधिकार आयोग के 57वें सत्र (अधिवेशन) में बोलते हुए एक प्रसिद्ध बलूच नेता, मेहरन बलूच ने कहा कि "हमारी त्रासदी 1947 में पाकिस्तान के निर्माण के तुरंत बाद शुरू हो गयी। पाकिस्तानी पंजाब की औपनिवेशिक सेना ने बलपूर्वक बंदूक के बल पर कालत पर कब्जा कर लिया।" अभी भी बलूचिस्तान में एक संघर्ष जारी है। प्रमुख बलूची नेता जैसे, अताउल्लाह मेंगल, सरदार महमूद खान अचकजाई, और नवाब खैर ब्ख्श मैरी–जो तीन बड़े बलूच बंशों के प्रमुख है–देश के विशाल प्राकृतिक संसाधनों के शोषण हेतु स्थानीय लोगों के निष्कासन के विरोध की अगुआई कर रहे हैं। मैरी और उनके सैकड़ों समर्थक गिरफ्तार हो चुके हैं।

1977 तक इंदिरा गाँधी सरकार ने सक्रिय रूप से बलूचियों और पठानों की प्रजातांत्रिक आकांक्षाओं का समर्थन किया। बलूची योद्धाओं को राजस्थान के मरूस्थलों में युद्ध का

प्रशिक्षण दिया गया और भारत ने उन्हें वित्तीय और कूटनीतिक सहयोग दिया बंगलादेश की स्वतंत्रता के साथ (बाद) इंदिरा गाँधी ने कहा (माना) कि सिंध, बलूचिस्तान और पख्तूनिस्तान को भी (बंगलादेश का) अनुसरण करना चाहिए। 1977 में उनके चुनावी हार के बाद जनता सरकार के विदेश मंत्री के रूप में बाजपेयी ने विभ्रांति पूर्ण ढंग से और उलझी बुद्धि के साथ पाकिस्तान से संबंध सामान्य बनाने का प्रयास किया। अब हम लाहौर को उनकी पहली यात्रा के रूप में जानते हैं पर वह सही नहीं है। पंजाबी अधिकृत (प्रभावी) काश्मीर से स्वाधीनता हेतु संघर्षरत अनेक आंदोलनों को भारत द्वारा दिया जा रहा समर्थन वापस ले लिया गया। एल.के.आडवानी वैसे तो अब भी हथियारों के समर्थक थे जैसा कि वे आज हैं लेकिन तब उन्होंने विरोध नहीं किया यहाँ तक कि जी.एम.सैयद के सिंध आंदोलन के साथ विश्वासघात किया गया तब भी नहीं। वे कराँची के अपने गृह नगर जाकर और अपने पुराने स्कूल की यात्रा कर काफी खुश थे। बाजपेयी द्वारा जिया को दिया आश्वासन–जिसने भारत को बर्बाद करने के लिए “हजार घावों के द्वारा कत्ल” की नीति की शुरूवात की– यह बताता है कि बलूचियों को राजस्थान में चल रहे शिविरों को छोड़ने के लिए विवश किया गया और सभी वित्तीय, सैनिक एवं कूटनीतिक सहयोग खत्म कर दिए गए। यद्यपि जनता सरकार बहुत लंबे समय तक नहीं रही लेकिन नुकसान हो चुका था। अब पाकिस्तानी हमसे आत्मनिर्णय के बारे में बातचीत करना चाहते हैं।

कश्मीर के लिए पाकिस्तान का धर्म आधारित प्रयास बहुत अधिक समय तक नहीं चलेगा, बंगाली बगावत और संबंध विच्छेद ने 1971 ई. में यह स्पष्ट कर दिया। अब यह अधिक उन्नत आत्मनिर्णय के सिद्धान्त पर आश्रित है। यह भारत में और भारत के बाहर रहनेवाले उनके मित्र आवेग के साथ कहते हैं। पाकिस्तानी, अब जूनागढ़ और हैदराबाद में किए गए भारतीय विश्वासघातों का राग नहीं अलापते हैं। इन दो शान्दार राज्यों में स्वतंत्र चुनाव, पूर्ण एकीकरण और हिन्दुओं के बहुसंख्यक होने के वास्तविक सत्य के कारण यह संभव हुआ है। लेकिन काश्मीर अभी भी हमारा पीछा कर रहा है। यहाँ मुस्लिम बहुसंख्यक हैं और इनके आत्मनिर्णय की माँग ने हमें उलझा रखा है। क्या यह वह नहीं है जिसका लोकतंत्र से संबंध है ? लेकिन विडंबना यह है कि पाकिस्तान आत्मनिर्णय का समर्थक है जबकि इसकी अपनी जनता किसी प्रजातांत्रिक अधिकार का उपयोग नहीं करती। तीन स्तम्भ जिन पर पाकिस्तानी राज्य टिका हुआ है वे हैं– अल्लाह, आर्मी और अमेरिका। पाकिस्तानी जनता का इस अभियान(बलूचिस्तान पर आक्रमण) में कोई भूमिका नहीं है। पाकिस्तानी नेता जम्मू और काश्मीर पर हमसे राजनीतिक अनुबंध करना चाहते हैं। उनके प्रधान मंत्री ने एक बार फिर लोकतंत्र का लबादा ओढ़ लिया है जो जनरल परवेज मुशर्रफ के बंकर (तहखाने) के बाहर लटकता रहता है। लेकिन हमें उनसे आत्मनिर्णय के प्रश्न पर बात करने से बिल्कुल पीछे नहीं हटना चाहिए। यह एक दोधारी (तलवार) है और दोनो मार्गों को काट देती है। बलूचिस्तान के उदाहरण को ही ले लें।

मोहन गुरूस्वामी

ई मेल– mguru@sify.com